सोमनाथ की अविस्मरणीय यात्रा

दया शंकर मिश्र
लेखक

जब से मैंने आचार्य चतुरसेन शास्त्री की चर्चित ऐतिहासिक पुस्तक सोमनाथ को पढ़ा, मेरे मन में ये आस जाग उठी कि आततायी महमूद गजनवी द्वारा लूटे और विध्वंस किए गए मंदिर में विराजे प्रभु सोमनाथ जी के दर्शन को समय मिला तो जरूर जाऊंगा। बाबा-दादा से सुना था कि सबसे पहले सोमनाथ मंदिर का निर्माण सोने से चंद्रदेव (सोमराज) ने बाद में पुनर्निर्माण रावण ने चांदी से, भगवान कृष्ण ने लकड़ी से और राजा भीमदेव ने पत्थरों से करवाया था। इतना सब सुनने के उपरांत मानव मन में उस पवित्र स्थल के दर्शन करने की भावना बलवती होना स्वाभाविक है। मुझे श्री सोमनाथ जी के दर्शन का सौभाग्य बदा था। शाम के समय हम लोग पहले से बुक किए हुए श्री सोमनाथ ट्रस्ट द्वारा संचालित विश्राम स्थल पर पहुंचे। कम पैसे में वहां की उत्कृष्ट व्यवस्था और साफ सफाई देखकर हम लोग दंग रह गए।

हम सभी के मन में श्री सोमजी के दर्शन की इतनी उत्कंठा थी कि जल्दी ही नहा धोकर वहां से लगभग एक किमी दूर स्थित मंदिर पहुंच गए। बाहर से ही मंदिर की विशालता और शिखरों की नक्काशी देखकर मन-मयूर नर्तन करने लगा। मंदिर की सुरक्षा में तैनात सिक्योरिटी के नियमों का पालन करते हुए हम लोग पंक्तिबद्ध होकर मंदिर के अंदर पहुंचे तो आरती का समय हो रहा था। इसके उपरांत पट बंद हो जाते हैं, जो दूसरे दिन प्रातः खुलते हैं।

दोबारा दर्शन करने का बाद हुई संतुष्टि

मंदिर में पुरुषों और महिलाओं के दर्शन हेतु जाने एवं निकलने के लिए पृथक-पृथक लाइन थी। महिलाएं समुद्र की ओर स्थित द्वार से जबकि पुरुष देवी अहिल्याबाई द्वारा निर्मित करवाए गए मंदिर की तरफ स्थित द्वार से दर्शन के उपरांत बाहर जा रहे थे। आशा के विपरीत प्रभु सोमनाथ जी असीम कृपा से हम लोगों को बहुत ही आराम से श्री सोमजी के विशाल ज्योतिर्लिंग के दर्शन हुए। एक बार दर्शन से मन नहीं भरा और बाहर निकलकर मैं पुनः लाइन में लग गया। दोबारा जी भरकर उनकी प्रतिमा को देखा, तो मन में संतुष्टि हुई। आरती अभी चल रही थी, भक्त कतारबद्ध हर-हर महादेव निनाद करते हुए दर्शन कर रहे थे।

जब भाभीजी बिछड़ गईं

हम सब लोग बाहर निकलकर पहले से तय स्थान पर एक दूसरे से मिले। वहां पर मैं, भाई साहब और मेरी पत्नी तो आ गईं, लेकिन भाभीजी का कहीं अता-पता नहीं था। दिन भर के सफर से हम लोग काफी थक चुके थे, लेकिन बड़े भाई की पत्नी की तलाश आवश्यक थी। मैं और भाई साहब उनको ढूंढते हुए हनुमान जी की तरह मंदिर के एक दो चक्कर लगा आए, परंतु वे नहीं मिलीं। सभी बड़े पशोपेश में थे कि वे आखिर हैं कहां! हम लोग एक तरफ बैठ गए और भाई साहब से कहा कि आप दूसरी तरफ बैठिए। बाहर निकलने के दो ही रास्ते हैं। मिलेंगी जरूर। इतने में मंदिर के पिछवाड़े की तरफ से एक सज्जन कंधे में झोला डाले हुए आए। मैं पहले और श्रीमती जी मेरे बाद बैठी थीं। उनको देखते ही न जाने कैसे मेरे हाथ ऊपर उठ गए और उन्होंने मुझे कपड़े के छोटे थैले में एक लड्डू पकड़ा दिया। श्रीमती जी ने भी हाथ बढ़ाया, लेकिन वे किसी को भी प्रसाद दिए बिना आगे बढ़ गए। मैं अवाक था, केवल मुझे ही प्रसाद मिला। जब तक स्थिर होता, कुछ विचार करता वे आगे जाने कहां निकल गए। मैं उनको ठीक से देख भी नहीं पाया। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मुझ अकिंचन को प्रभु सोमनाथ ही तो प्रसाद देने नहीं चले आए थे।

इसके उपरांत मैंने एक चक्कर मंदिर का और लगाने का निश्चय किया। समुद्र की तरफ स्थित द्वार के पास पहुंचते ही देखा कि भाभीजी मंदिर की दीवारों में उत्कीर्ण देव प्रतिमाओं की श्रद्धापूर्वक चरण वंदना, पूजा-अर्चना कर रही थीं। वे इस कदर भक्ति में लीन थीं कि उनको होश ही नहीं थी कि वे किसी के साथ आई हैं, कोई उनका इंतजार कर रहा है। उनको देखकर मैं वैसे ही हर्षातिरेक से भर गया जैसे हनुमानजी मां सीता को अशोक वाटिका में पाकर खुश हुए थे। मैंने उनकी पूजा में बाधा उत्पन्न करते हुए ईश्वर आराधना में लीन उनके मन को वापस धरातल पर लाने हेतु आवाज दी और सूचित किया कि मंदिर बंद होने वाला है, हम लोगों को वापस चलकर भोजनादि करना है।

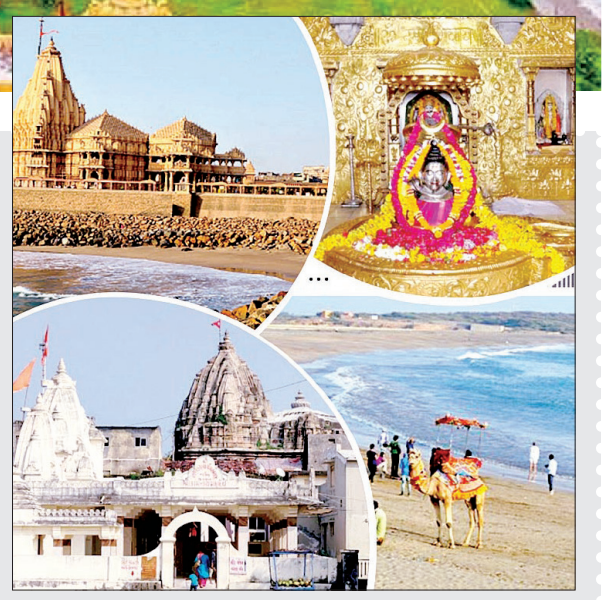

दूसरे दिन प्रातः हम लोगों ने पुनः दिव्य दर्शन किए और आसपास के दर्शनीय स्थलों का भ्रमण कर दोपहर में वापसी के लिए समीप ही वेरावल स्थित रेलवे स्टेशन से वंदेभारत पकड़ ली। जल्दबाजी में की गई यह यात्रा कई मायनों में अविस्मरणीय बन गई। रास्ते भर पुनः दर्शनार्थ आने को सोचता हुआ मैं श्रीसोमजी के ख्यालों में खो गया।

जॉब का पहला दिन

मरीजों का उपचार कर खुद को गौरवान्वित महसूस किया

वर्ष 2010 मेरे जीवन में एक नए अध्याय की शुरुआत लेकर आया। एलएलआरएम मेडिकल कॉलेज, मेरठ से मेडिकल की पढ़ाई पूरी करने के बाद मुझे शासन से नियुक्ति पत्र मिला और मेरी पहली तैनाती शाहजहांपुर जिले के तिलहर सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (सीएचसी) में बतौर मेडिकल अफसर हुई। यह मेरी नौकरी का पहला दिन था। एक ऐसा दिन जो आज भी स्मृतियों में उतना ही ताजा है। जब मैं सीएचसी के परिसर में प्रवेश कर रहा था, तभी ओपीडी के बाहर मरीजों की भारी भीड़ देखकर क्षणभर के लिए मन कुछ संकोच से भर गया। कॉलेज में पढ़ाई के दौरान मरीजों को संभालने का अनुभव था, लेकिन इतनी बड़ी संख्या एकदम से सामने आना मेरे लिए बिल्कुल नया था। ऐसे में मन खुद से कई सवाल पूछ रहा था- क्या मैं यह जिम्मेदारी निभा पाऊंगा? क्या मैं इन लोगों के लिए कुछ सार्थक कर सकूंगा? इन्हीं विचारों के बीच चिकित्सा अधीक्षक, डॉ. संजय अग्रवाल से मिला। उन्होंने मुस्कुराकर मेरा स्वागत किया, कागजी औपचारिकताएं पूरी कराईं और मुझे शुभकामनाएं दीं। उनके आत्मीय व्यवहार ने भीतर एक भरोसा-सा भर दिया। इसके बाद मैं सीधे ओपीडी के अपने कक्ष में पहुंच गया और दिनभर मरीजों को देखने में व्यस्त हो गया।

पहले ही दिन 45 मरीजों की जांच की किसी को बुखार था, किसी को त्वचा संबंधी परेशानी, कोई पुरानी बीमारी लेकर आया, तो कोई छोटी-सी समस्या के साथ। मैंने दवाइयों के साथ-साथ उन्हें उनके रोगों के प्रति जागरूक करने का भी प्रयास किया। इलाज के साथ जानकारी देना हमेशा से मेरी प्राथमिकता रही, क्योंकि जागरूकता ही बीमारी को जड़ से मिटाने का पहला कदम है। 2 बजे के आसपास ओपीडी समाप्त होने पर टीकाकरण से संबंधित एक विभागीय बैठक में भी शामिल हुआ। यह मेरे लिए पहली सरकारी चिकित्सकीय बैठक थी, जिसने आने वाले समय के प्रशासनिक कार्यों की जिम्मेदारी का भी एहसास कराया। जब शाम को घर लौटा, तो मन गहरे संतोष से भरा हुआ था। उस दिन एक अलग ही अनुभव जहन में हिलोरे मार रहा था और

उस वक्त हेडमास्टर के पद पर शिक्षा विभाग में सेवाएं दे रहे मेरे पिता रफीक अहमद अंसारी की एक बात याद आई कि "डॉक्टर बनने के बाद सरकारी सेवा ही करना, क्योंकि सरकारी अस्पतालों में ऐसे मरीज आते हैं, जो कि आर्थिक रूप से कमजोर होते हैं। उनका इलाज करने से उन्हें नई जिंदगी देने के साथ ही तुम्हें भी एक सकारात्मक ऊर्जा मिलेगी।" उस दिन मुझे पहली बार महसूस हुआ कि वे कितने सही थे।

सरकारी अस्पताल में एक-एक मरीज की मुस्कान, उनकी दुआएं और उनका भरोसा- यही असल कमाई है। इसी भाव के साथ 2010 में शुरू हुआ मेरा सेवाकार्य आज भी उसी समर्पण के साथ जारी है। वर्तमान में मैं बरेली के सीएमओ कार्यालय में अपनी सेवाएं दे रहा हूं। इन पंद्रह वर्षों में बहुत कुछ बदला समय, स्थान, पद और कार्यशैली, लेकिन मरीजों की सेवा का भाव और चिकित्सा के प्रति समर्पण आज भी उतना ही अडिग है। यही सेवा मुझे हर दिन नई ऊर्जा देती है और डॉक्टर बनने के वास्तविक उद्देश्य को जीवित रखती है।

- डॉ. लईक अंसारी
डिप्टी सीएमओ,
बरेली।

याद आते हैं स्कूल के अमरूद-आम के पेड़

आपबीती

बचपन के विद्यालय के प्रांगण में कदम रखता हूं, तो बीते हुए दिनों की यादें फिर आंखों के समक्ष तैरने लगती हैं और लगता है जैसे कल ही की बात हो। हालांकि विद्यालय को छोड़े हुए चार दशक का समय हो गया है, लेकिन बचपन जीवन का एक ऐसा क्षण है, जो भुलाए नहीं भूलता। स्कूल में हमारे हिस्ट्री के सर रहे लोकप्रिय केके तिवारी सर बताते हैं कि जब विद्यालय की स्थापना हुई थी तब स्कूल के संस्थापक रहे ओल्ड जॉन निकटवर्ती बच्चों को पैडल रिक्शा में स्कूल लाया करते थे और उन्हें छोड़ने भी जाया करते थे।

आज चंद बच्चों से शुरू हुआ यह सफर कई हजार बच्चों तक पहुंच गया है। यहां से पढ़े बच्चे कई क्षेत्रों में अपना नाम कमा रहे हैं। लखनऊ के वर्तमान मंडल आयुक्त भी इसी स्कूल से पढ़े हुए हैं। मेरा भी सौभाग्य है कि मैंने इस विद्यालय से कक्षा 10 तक शिक्षा प्राप्त की है। आज यह विद्यालय 12 वीं तक है, पर हमारे समय में यह विद्यालय दसवीं तक की हुआ करता था।

दीपक नौगाई
लेखक, हल्द्वानी

इस कॉटेज में आगे एक म्यूजिक रूम तथा एक टीटी यानी टेबल टेनिस रूम हुआ करता था। साथ ही शिक्षकों के बैठने के लिए भी एक कमरा था और छोटे बच्चों की कक्षाएं भी। पीछे एक कैंटीन भी थी और उसके बगल में बच्चों के लिए झूले और लाल अमरूद के कुछ पेड़। इन अमरूद और आम के पेड़ों से भी बड़ी सुनहरी यादें जुड़ी हुई है। अक्सर अमरूद और आम तोड़ने के लिए मैं इन पेड़ों में चढ़ जाया करता था। कुछ अमरूद पेड़ पर बैठकर खाए, तो बाकी पेड़ के नीचे खड़े अपने दोस्तों को दिए। कुछ साथी यह देखने के लिए खड़े रहते थे कि कोई शिक्षक तो नहीं आ रहा। जैसे ही कोई आता, दोस्तों की सीटी बजती और मैं पेड़ से नीचे कूद जाता। झूलों में बैठने के लिए तो हम दोस्तों में जैसे होड़ सी लग जाती। मुझे वो गोल-गोल घूमने वाला झूला बहुत पसंद था। हम उसे जोर से घुमाते और दौड़कर उस पर चढ़ जाते। इस झूले पर चढ़ते समय मैं कई बार गिरा भी और चोटें भी आईं।

म्यूजिक रूम से जुड़ी कुछ अच्छी तथा कुछ ज्यादा कटु यादें भी हैं। गाना गाने में ज्यादातर लड़के अच्छे नहीं थे। चूंकि हमारे संगीत के टीचर जिनका नाम सैमसन था बहुत सख्त थे, इसलिए अधिकांशतः हमें उनकी डांट और पिटाई खानी पड़ती थी। आज याद नहीं कि गाना न गाने पर कितनी बार मेरी पिटाई हुई थी। मुझे संगीत का पीरियड शायद ही कभी अच्छा लगा हो। मेरी तथा अन्य लड़कों की तो यही कोशिश रहती थी कि किसी तरह म्यूजिक रूम में जाने से बच जाए। एक बार हमारी म्यूजिक सर से कुछ बहस हो गई, तो वह हम सब लड़कों को प्रिंसिपल के पास ले गए और फिर वहां जो हमारी पिटाई हुई, वह आज भी मैं नहीं भूला। साथ में था एक टेबल टेनिस का रूम, जहां टेनिस खेलने के लिए एक टेबल लगी हुई थी। हालांकि मैंने तो टीटी में यदा-कदा ही हाथ आजमाया, क्योंकि इस खेल में मुझे जरा भी रुचि नहीं थी, पर सच कहूं तो यह हमारे छिपने का रूम था, खासकर SUPW पीरियड में। SUPW यानी ऐसा पीरियड, जिसमें हमें हस्तकला का जौहर दिखलाना पड़ता था। लड़कियों की तरह कुछ चीजें बनाने में हमारी तो कभी रुचि रही नहीं, इसलिए जैसे ही SUPW का पीरियड आता था, हम कुछ लड़के पिछले दरवाजे से निकलकर छुपते-छुपाते टेबल टेनिस रूम में पहुंच जाया करते थे। कभी कोई टीचर हमें वहां देख लेता और कुछ पूछता तो हम झूठ कह देते कि हमें टेबल टेनिस सीखने के लिए भेजा गया है। चुपचाप टेनिस खेलते और पीरियड खत्म हुआ तो वापस अपनी क्लास में। आज लगता है कि हमें झूठ नहीं बोलना चाहिए था और ऐसा नहीं करना चाहिए था, लेकिन क्या दिन थे वो भी भुलाए नहीं भूलते। ऐसी कई यादें हैं, पर यादों का क्या वह तो समय-समय पर याद आ ही जाती हैं।